अद्भुत व्याख्या

क्या आज आपने गौड़ीय वैष्णवों की तरह जन्माष्टमी मनाई?

ये समझने से पहले यह समझना होगा कि गौड़ीय वैष्णव कौन हैं? गौड़ीय वैष्णव मतलब 'श्रीगौरांग महाप्रभु के अनुयायी'। गौरांग महाप्रभु के अनुयायी 'गौड़ीय वैष्णव' का एक ही मतलब है कि वे वो साधना करते हैं जिसमें उनके दो स्वरूप होते हैं-

एक- नित्य नवद्वीप लीला में किशोर रूप में श्री गौरांग महाप्रभु के सेवक के रूप में, व दूसरा- राधाकृष्ण की ब्रज लीला में एक मंजरी के स्वरूप में।

गौड़ीय वैष्णव का इसके अलावा कोई और दूसरा मतलब न होता था, न होता है, न ही होगा भविष्य में। गौड़ीय वैष्णव मतलब वह साधक जिसके दो स्वरूप हैं नित्य लीला में। महाप्रभु के अप्रकट होने के बाद से लेकर अब तक जितने भी प्रमाणिक परम्परा हैं, सबमें यही भजन धारा चलती है।

अब हमारा प्रश्न यह था कि क्या हमने गौड़ीय वैष्णवों की तरह जन्माष्टमी मनाई? क्या गौड़ीय वैष्णव कुछ भिन्न प्रकार से मनाते हैं और अन्य भक्त लोग कुछ भिन्न प्रकार से? यह प्रश्न भी मन में हो रहा होगा? बिल्कुल। सभी वैष्णव सम्प्रदाय जो हैं यदि प्रमाणिक हैं, तो एक ही प्रकार से वे जन्माष्टमी मनाते हैं। यदि हमने गौड़ीय वैष्णव तरीके से मनाई तो हम आपको बताएँगे वह क्या होता है। फिर आप खुद अपने आप से पूछिए, क्या आपने गौड़ीय वैष्णव के तरीके से मनाई कि नहीं...

गौड़ीय वैष्णव जन्माष्टमी कैसे मनाते हैं? गौड़ीय वैष्णव को छोड़िए, वैष्णव क्या होता है? वैष्णव माने जो केवल अपने इष्ट की प्रसन्नता के लिए कार्य करता हो। मेरे इष्ट कौन हैं... तो गौड़ीय वैष्णव के इष्ट कौन हैं? 'महाप्रभु' और *'आमार ईश्वरी वृंदावनेश्वरी...'*, हमारे ईश्वर कौन, ईश्वरी कौन हैं? वृंदावनेश्वरी। तो जो गौड़ीय वैष्णव हैं, वे केवल अपनी ठकुरानी के लिए, अपनी स्वामिनी की प्रीति के लिए कार्य करते हैं। अन्य कोई कार्य नहीं करते चाहे ठाकुर की सेवा क्यों न हो, कार्य नहीं करते! पहले 'राधे' बाद में 'श्याम'।

अब यह जन्माष्टमी कैसे मनाते हैं गौड़ीय वैष्णव? 'हम', यानि कि 'मैं'। 'मैं' कौन? 'मैं' मंजरी! जो 'मैं', मंजरी हूँ राधारानी की, राधारानी की सखी, बारह (१२) वर्षीय सखी..., तो मैं राधारानी के साथ रहती हूँ, कहाँ पर? जन्माष्टमी कहाँ मनाई जाती है? कहाँ मनाई जाती है? श्रीकृष्ण के घर में। उनका अभिषेक होता है नन्दीश्वर में। तो राधारानी को आमंत्रण दिया जाता है, राधारानी के पिताजी को भी षष्ठी के दिन।

अष्टमी, सप्तमी, षष्ठी। षष्ठी के दिन आमंत्रण दिया जाता है कि कृपा करके आएँ और जन्माष्टमी के महामहोत्सव में सम्मीलित हों।

तो राधारानी अपनी सखियों के साथ, यानि कि हमारे साथ कहाँ पहुँचती हैं? नन्दीश्वर! कब? सप्तमी के दिन। तो आज है अष्टमी, तो हम तो नन्दीश्वर में वैसे ही हैं। आप जन्माष्टमी मना रहे हो..., कैसे? सुबह-सुबह जब आप स्नान इत्यादि कर लेते हो तो कुन्दलता आती हैं आपके पास..., कुन्दलता श्रीकृष्ण की भाभी, चचेरे भाई की पत्नी। वे आती हैं और बोलती हैं- "हे राधे, हे सखियों, चलो कृष्ण के अभिषेक के लिए चलो।"

तो हमने अभी जन्माष्टमी मनाया, अभिषेक के दर्शन किए तो कैसे करने चाहिए दर्शन? हम कहाँ खड़े हैं? कृष्ण की वेदी के पास, जहाँ कृष्ण का अभिषेक हो रहा है। किसके साथ हो आप? जन्माष्टमी कैसे मना रहे हो? ठीक राधारानी के साथ खड़े हुए हो..., ठीक उनके साथ खड़े होकर नन्दीश्वर में..., साथ खड़े होकर दर्शन कर रहे हो। नहीं तो..., एक आप बात बताएँ कि आपको श्रीकृष्ण के दर्शन की या कृष्ण के अभिषेक देखने की क्या आवश्यकता है? आप तो कह रहे हो - *"आमार ईश्वरी वृंदावनेश्वरी"*, आप तो उनके अलावा, उनकी प्रीति के अलावा कोई कार्य करती ही नहीं हैं।

तो क्योंकि राधारानी वहाँ गई हुई हैं श्रीकृष्ण के अभिषेक में और आप उनके प्रसन्नता के लिए कार्य करते हैं, आप भी उनके साथ गए हुए हैं, स्वतंत्र भाव से नहीं गए। आप बोलें हम जन्माष्टमी मना रहे हैं, दर्शन कर रहे हैं अभिषेक के। क्यों? हमें अच्छा लगता है। यह ब्रज में "हमें अच्छा लगने" का कोई स्थान नहीं है। ब्रज में तो वही कार्य होता है जो श्रीकृष्ण को या राधारानी को पंसद हो। एक मंजरी smile तक नहीं करती, मुस्कुराती नहीं है बिना राधारानी की प्रसन्नता के लिए, कार्य करना तो बहुत दूर की बात है। अभिषेक देखना या कोई किसी का भी कार्य करना, यह तो बहुत दूर की बात है। स्वप्न में भी वह राधारानी की सेवा के सिवा कुछ नहीं सोचती। स्वप्न में कभी..., कदापि नहीं सोचती।

अब श्रीकृष्ण के दर्शन यदि आप कर रहे हैं तो आप कैसे सोचेंगे? कितना अच्छा लग रहा है। क्योंकि कृष्ण जो हैं वे अप्राकृत कामदेव हैं, वे इतने सुन्दर हैं, इतने सुन्दर हैं कि सुन्दर शब्द उनके सामने फीका होता है, इतने सुन्दर हैं। इतने सुन्दर व्यक्ति का अभिषेक हो रहा हो तो आँखें उसमें जड़ी रह जाएँगी स्वसुख कामना की वजह से। ठीक बात है? परन्तु ब्रज में स्वसुख का कोई स्थान नहीं है। आप ब्रज में खड़े हो, ठाकुर के अभिषेक के दर्शन कर रहे हो, किसके लिए? आपकी दृष्टि कहाँ पर है? ठाकुर के ऊपर?

नहीं, आपकी दृष्टि है आपकी ईश्वरी के सुख के ऊपर कि वे ठाकुर के अभिषेक का दर्शन करके कितनी खुश हो रहीं हैं, "हाय, मैं वारी जाऊँ, मेरी स्वामिनी को नज़र न लग जाए, कोई उन्हें देख ले कितनी खुश हैं, उन्हें नज़र न लग जाए", आप यह सोच रही हैं। इतनी खुश हैं राधारानी, आहा...!!

आप ठाकुर के दर्शन करते हो अणु प्रेम से, आपको इतनी खुशी मिलेगी तो जो साक्षात् प्रेम की मूर्ति हैं, वे दर्शन करेंगी श्रीकृष्ण का, तो उन्हें कितनी खुशी मिल रही होगी? और आपकी सारी खुशी किसमें है? राधारानी की खुशी में। तो राधारानी को खुश होता देखकर आप कितने-कितने खुश हो रहे हो। यह हो रहा है जन्माष्टमी में, यह कर रहे हो आप। कहाँ है नाभा? सुनो, अभी अपने स्वरूप में रहकर, यह कर रही हो खड़ी होकर। हाँ। 'हाँ-हाँ मेरी स्वामिनी कितनी खुश हो रही हैं!' हाँ, उनके खुश में खुशी। भक्ति मतलब --

"तत् सुखे सुखित्वम्, तत् विस्मरणे परम व्याकुलता इति"

(नारद भक्ति सूत्र)

उनके सुख में मेरा सुख।

और मंजरी तो क्या हैं? ठाकुर के सुख में भी अपना सुख नहीं है। केवल राधारानी के सुख में उनका स्वयं का सुख है।

जो गौड़ीय वैष्णव हैं, वे एक स्वरूप से तो राधारानी के साथ खड़े होकर, कृष्ण दर्शन करके जन्माष्टमी मना रहे हैं। क्या आप सबने ऐसा किया अभी? आपको सब यही सोचना चाहिए था - ये सखियाँ हैं, ये मंजरियाँ साथ में हैं, यही सोचना चाहिए था। कि नहीं? नहीं, तो सोचा करो। देखो, यदि जन्माष्टमी नहीं मनाओगे सही तरीके से, तो अन्य दिन कैसे मनाओगे सही तरीके से? क्योंकि ब्रज में तो रोज़ ही festival है। ब्रज में तो प्रत्येक कदम, गमनम्-नाट्यम्! गमनम्-नाट्यम्! शब्द जो हैं वह गायनम्, शब्द जो हैं वह गाने के समान हैं; चलना जो है नाट्य है, नृत्य के समान है, और प्रत्येक दिन तो यह festival है ही है वैसे ही। तो हम आज का festival सही नहीं मनाओगे जन्माष्टमी तो कल क्या करोगे?

भक्ति कितने दिन करनी है, साल में? केवल तीन सौ पैंसठ (३६५) दिन। तो तीन सौ चौंसठ (३६४) कैसे करोगे, जब आज के दिन भक्ति को सही रूप से नहीं कर पाओगे?

अच्छा ! अन्य भक्त कैसे festival मना रहे हैं? आपकी दृष्टि कहाँ है? राधारानी के सुख पर। अच्छा ! यदि आप भगवान् श्रीकृष्ण को सखा रूप से पाना चाहते हो तो आपकी दृष्टि कहाँ होगी? सीधा कृष्ण के ऊपर- 'हाय मेरे सखा, मेरे कितने सुन्दर सखा हैं इनका अभिषेक हो रहा है, सब लोग देख रहे हैं, किसी की नज़र न लग जाए।' आप खुश भी हो रहे हैं, डर भी रहे हैं। प्रेम का स्वभाव ही यही है। खुश भी होते हैं अपने प्रेमास्पद को देखकर और डरते भी हैं, इनको कुछ हो न जाए, ब्रज में..., कुछ हो न जाए। ठाकुर ईश्वर नहीं हैं-

"व्रज-लोकेर भावे पाइये ताँहार चरण।
कृष्ण के ईश्वर नाहि जानि ब्रज जन।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत् मध्य लीला ९.१२८)

ठाकुर को ईश्वर के रूप में नहीं जानता कोई ब्रज में। वे यह सोचते हैं इनको नज़र न लग जाए, इन्हें कुछ हो न जाए, इतने लोग दर्शन कर रहे हैं, इतने सुन्दर मेरे ठाकुर हैं - सखा ऐसे सोच रहे हैं।

और जब जन्माष्टमी हो जाएगी कल या परसों, तीन दिन तो गोचारण बंद रहेगा न? सप्तमी, अष्टमी और नवमी। और दशमी को क्या होगा? सारे सखा क्या स्वभाव से होंगे? हाय, कृष्ण सुबह छः (६) बज रहे हैं, साढ़े छः (६:३०) बज रहे हैं, स्नान इत्यादि कर रहे हैं, कब हमें बुलाएँगे और हम इकट्ठे गोचारण को जाएँगे, कब उनके साथ बैठकर भोजन करेंगे? अगर सखा भाव में तो क्या सोचोगे हमेशा, क्या सोचोगे? कब ठाकुर बुलाएँगे, कब मैं गोचारण को जाऊँगा। मैं जाऊँगो गोचारण को, यह सोचोगे, अगर आप सखा भाव में हो। और मंजरी भाव में हो, तो क्या करोगे दशमी में? अच्छा बताओ नवमी में क्या करोगे? नवमी में भी आप नन्दीश्वर में ही रह रह हो, रात को नन्दीश्वर में ही होगे। नवमी में फिर राधारानी की सेवा में ही होगे। फिर नवमी छोड़कर फिर राधारानी के घर पर जाएँगे, नवमी की शाम को। अच्छा दशमी को?

यदि आप वात्सल्य भाव से हैं..., कि आप भगवान्..., ठाकुर को अपने बालक रूप में देखना चाहते हैं तो आप कैसे दर्शन करोगे? हाय, मेरे बालक का अभिषेक हो रहा है, मेरे छोटे बच्चे का। यशोदा माता को वे उनके नित्य किशोर श्रीकृष्ण भी हमेशा बालक रूप में दिखते हैं। यह तो उन्हें कोई मज़ाक में भी बोलता है न कृष्ण की शादी कर दो, कहती हैं- "ए तेरी मति मारी गई है? मेरा बालक इतना छोटा है, उसकी शादी की उम्र है क्या अभी?"। तो यदि आप वात्सल्य भाव में हो, वात्सल्य भाव में कृष्ण की प्राप्ति

करना चाहते हो, तो आप अलग प्रकार से कृष्ण अभिषेक का दर्शन करोगे। सखा भाव में हो तो अलग प्रकार से और यदि गौड़ीय वैष्णव हो, तो अलग प्रकार से श्रीकृष्ण का दर्शन करोगे।

और यदि नायिका भाव में हो, कि कृष्ण को अपने प्रेमास्पद रूप में, जैसे ललिता विशाखा हैं या अन्य सखियाँ हैं, जिनका अंग-संग होता है कृष्ण से, यदि उस रूप में पाना चाहते हो तो कैसे दर्शन करोगे? बताओ... आपको आपके ठाकुर के सिवा कुछ नज़र नहीं आएगा, ठाकुर का अभिषेक हो रहा है, मेरे श्यामसुन्दर का अभिषेक हो रहा है, आप उसी दर्शन में विभोर हो जाओगे। तो कृष्ण का अभिषेक हर प्रमाणिक सम्प्रदाय के भक्त अलग प्रकार से करते हैं, बिल्कुल अलग प्रकार से, और एक ही प्रकार से करते हैं, दो प्रकार से नहीं।

अच्छा एक स्वरूप में तो आप ब्रज में हो और दूसरे स्वरूप में? हाँ, गौरांग महाप्रभु के साथ। किसके साथ? चैतन्य महाप्रभु के साथ नहीं, गौरांग महाप्रभु के साथ। क्योंकि नवद्वीप में महाप्रभु सन्यासी नहीं हैं, वे ग्रहस्थ हैं, दो पत्नियों के साथ निवास करते हैं। उनके साथ आप अभिषेक देखने के लिए आओगे, पर महाप्रभु क्या करेंगे? वे कृष्ण भावावेश में आ जाते हैं जन्माष्टमी के दिन। और जहाँ मण्डप होता है अभिषेक का, वहाँ खुद जाकर बैठ जाते हैं। और सारे दासगण, अद्वैताचार्य, महाप्रभु का अभिषेक कर रहे होते हैं कृष्ण स्वरूप में। यह नित्य नवद्वीप लीला में जन्माष्टमी की नित्य जन्माष्टमी लीला है, महाप्रभु का अभिषेक होता है उस समय।

तो आप गौड़ीय वैष्णव हो। क्या आपने गौड़ीय वैष्णवों की तरह जन्माष्टमी मनाई? मनाई कि नहीं, हाँ या न? नहीं मनाई तो मनाओ। हरे कृष्ण जप किसलिए कर रहे हो? हरे कृष्ण जप जो कर रहे हैं गौड़ीय वैष्णव, वे एक ही प्रकार से जन्माष्टमी मनाते हैं, वह यह प्रकार है।

हमने कीर्तन किया, सिर्फ तीन शब्द थे उसमें -- 'कृष्ण, राधे और वृंदावन'। यदि गौड़ीय वैष्णव हो तो आपको ये तीनों को समझना अति-अति-अति..., आवश्यक है। ये कृष्ण कौन हैं? ये राधा कौन हैं? ये ब्रज क्या है? यदि गौड़ीय वैष्णव नहीं हो, केवल सख्य भाव में उपासक हो, तो जय कृष्ण और जय वृंदावन, इसमें हो जाएगा कार्य। अल्प... राधारानी की विस्तृत जानकारी की कोई बहुत आवश्यकता नहीं है। यदि वात्सल्य भाव में भी हो..., तो राधारानी के विस्तृत जानकारी की आवश्यकता है क्या? नहीं है।

"दूरे स्निग्धपरम्परा विजयतां दूरे सुहृन्मण्डली
भृत्याः सन्तु विदुरतो व्रजपतेरन्यः प्रसङ्गः कृतः।
यत्र श्रीवृषभानुजा कृतरतिः कुञ्जोदरे कामिना
द्वारस्था प्रियकिंकरी परमहं श्रोष्यामि कांचिध्वनिम्।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि ७४)

दूरे -- वे बहुत दूर हैं, कौन? माता पिता राधाकृष्ण की लीला से, बहुत दूर हैं।

'दूरे स्निग्धपरम्परा दूरे सुहृन्मण्डली'-- और जो सखा हैं, वे भी बहुत दूर हैं। सखा क्या सोचते हैं? हम गोचारण करेंगे, हम खेलेंगे, हम एक दूसरे को झूठा खिलाएँगे, हम शर्त लगाकर जीतेंगे-हारेंगे, वे यह सोचेंगे। उनको राधाकृष्ण की लीला से कोई मतलब नहीं है। हर कोई अपने भाव में परिपूर्ण है। परिपूर्ण! अपने भाव में परिपूर्णता अनुभव करता है। उसको उसी लोक पर और क्या-क्या हो रहा है, वह जानने की आवश्यकता नहीं है जैसे हम जानना चाहते हैं न, क्या हुआ, क्या हुआ? क्यों...? क्योंकि हम अपूर्णता अनुभव कर रहे हैं इसलिए जानना चाहते हैं। परन्तु भक्त जो है, वह हमेशा पूर्णता अनुभव करता है, उसे क्या मतलब कहीं पर कुछ हो, मेरी ठकुरानी के साथ मैं दिन-रात हूँ, मुझे और कुछ चाहिए ही नहीं। यह है गौड़ीय वैष्णव का भाव।

श्रीकृष्ण भगवान् हैं, कृपालु तो हैं ही हैं! पर जन्माष्टमी के दिन, अत्यंत कृपालु हैं, निःसंदेह। तो यदि हम जन्माष्टमी के दिन उनसे सही रूप से कुछ कामना करेंगे, तो वे निश्चय ही हम पर पूर्ण कृपा करेंगे। कैसे कामना करनी है उनसे? अगर आप स्वयं भी प्रार्थना करेंगे कुछ, तो उसमें तो, यह भौतिक मनुष्यों के भाव उसमें mix कर देंगे, तो प्रार्थना विशुद्ध ही नहीं होगी। समझें आप बात? अपनी भावनाओं को खिचड़ी बनाकर कृष्ण के चरणों में अर्पण कर देंगे। कृष्ण को झूठा खिलाओगे क्या अपने thoughts का? झूठी चीज़ें खिलाओगे उनको? अपने गन्दे मल्लीन विचारों की? नहीं। तो विचार किनके परम शुद्ध-विशुद्ध होते हैं? नित्य सिद्ध परिकरों के। तो नित्य सिद्ध परिकर किस प्रकार से प्रार्थना करते हैं श्रीकृष्ण से..., उस प्रकार से यदि हम प्रार्थना करेंगे तो हमारी प्रार्थना खरे सोने की तरह होगी और श्रीकृष्ण तुरन्त कृपा करेंगे।

तो कैसे प्रार्थना करते हैं आचार्यपादगण, जन्माष्टमी के दिन? कृष्ण को क्या प्रार्थना करनी चाहिए, राधा को क्या प्रार्थना करनी चाहिए, ब्रज को क्या प्रार्थना करनी चाहिए, वे हम जानेंगे। हमने तो सोचा था कि बहुत कुछ बताएँगे..., अभी तो प्रारम्भ किया और आधा समय हो गया हमारा। अभी तो हमने प्रारम्भ भी नहीं किया। कैसे बताएँगे कृष्ण का या

राधा का? ब्रज पता नहीं कब आएगा? चलिए कृष्ण से प्रारम्भ करते हैं। प्रार्थना कैसे करनी है?

"श्रीगोविन्द व्रजवरवधूवृन्दचूड़ामणिस्ते
कोटिप्राणाम्यधिक-परमप्रेष्ठपादाब्जलक्ष्मीः।
कैङ्कर्येणाद्भुत-नवरसेनैव मा स्वीकरोतु
भूयोभूयः प्रतिमुहुरधिस्वाम्यहं प्रार्थयामि।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि २५७)

यह प्रार्थना करनी है। साथ में करेंगे? करिए।

"श्रीगोविन्द व्रजवरवधूवृन्दचूड़ामणिस्ते, कोटिप्राणाम्यधिक-परमप्रेष्ठपादाब्जलक्ष्मीः
कैङ्कर्येणाद्भुत-नवरसेनैव मा स्वीकरोतु, भूयोभूयः प्रतिमुहुरधिस्वाम्यहं प्रार्थयामि"।।

इसका मतलब है कि, हे गोविन्द, *'श्रीगोविन्द व्रजवरवधूवृन्दचूड़ामणिस्ते'*-- हे गोविन्द, जिनके चरण, *कोटिप्राणाम्यधिक-परमप्रेष्ठपादाब्जलक्ष्मीः ...*, हे गोविन्द! जिनके चरणकमलों का सौंदर्य जो है तुम्हें कोटि प्राणों से भी अधिक प्रिय है..., 'तुम्हें', बोला जा रहा है कृष्ण को, 'तुम्हें', आपको नहीं। ब्रज में कोई ऐसी प्रार्थना नहीं करता - *'गोविन्दं आदि पुरुषं तमहं भजामि'*, यह प्रार्थना ब्रज में नहीं होती है। ब्रज में बोला जाता है, तुम्हें न, राधारानी का जो चरणों का सौंदर्य है, अपने कोटि प्राणों से भी अधिक प्रिय है यह हमें अच्छी तरह मालूम है, यह हमें अच्छी तरह मालूम है। तो हे गोविन्द! अपनी वही राधा का, उसी राधा का, *'कैङ्कर्येणाद्भुत-नवरसेनैव'* -- जो अद्भुत दास्य है, राधारानी का दास्य, वह हमें प्रदान करो।

क्या प्रार्थना है गोविन्द से? कि आप हमें प्राप्त हों, यह नहीं बोला जा रहा। क्या बोला जा रहा है? आपको तो उनके चरणकमलों का सौंदर्य ही इतना प्रिय है, तो आप मुझे उनका चरणों का दास्य देकर कृतार्थ करो, *मां स्वीकरोतु* -- मुझे स्वीकार करो, किस रूप में? अपने दास्य के रूप में? नहीं। अपनी सखी के रूप में? नहीं। अपने सखा के रूप में? नहीं। *मां स्वीकरोतु,* किस रूप में? *कैंकर्य अद्भुत* -- उनके अद्भुत दास्य, राधादास्य के, दासी के रूप में मुझे स्वीकार करो। *भूयोभूयः*-- बारम्बार, भूयोभूयः मतलब, बारम्बार। *प्रतिमुहुर* -- मतलब हर क्षण। मैं बारम्बार, हर क्षण..., *अधिस्वामी* -- मेरे स्वामी हो, अकेले के स्वामी नहीं हो, क्योंकि-

"आमार ईश्वरी होन वृंदावनेश्वरी।
तार प्राणनाथ बलि भजि गिरधारी।।"

उनके प्राणनाथ होने के कारण मेरे स्वामी हो। एकान्त में स्वामी नहीं हो, एकान्त में स्वामी तो व्रजवधुओं के होते हैं, ललिता-विशाखा इत्यादि के। परन्तु आप मेरे स्वामी हो क्योंकि आप राधारानी से सम्बन्धित हो। *अहं प्रार्थयामि* -- मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ, बारम्बार।

तो हम अगर गौड़ीय वैष्णव हैं तो हमें, *प्रतिमुहुर* -- हर क्षण, बारम्बार क्या प्रार्थना करनी चाहिए श्रीकृष्ण से? कि आप मुझे राधारानी का दास्य प्रदान करके कृतार्थ करो। केवल यही प्रार्थना हमें दिन-रात, चौबिस (२४) घण्टे यही करना चाहिए।

'गोविन्द' क्यों बोला गया है इस शब्द में? इसके पीछे रहस्य है। श्रीगोविन्द ! श्रीकृष्ण क्यों नहीं बोला? श्रीगोविन्द बोला। गोविन्द मतलब..., गो मतलब इन्द्रियाँ, विन्द मतलब प्राप्त करना। जिनकी इन्द्रियाँ..., श्रीकृष्ण की इन्द्रियाँ राधारानी को प्राप्त करने में सतत् उदग्रीव हैं, मतलब परम उत्कण्ठित हैं, कृष्ण की इन्द्रियाँ हर समय राधारानी को प्राप्त करने में। और राधारानी कृष्ण को आसानी से प्राप्त नहीं होती ब्रज में। वे भगवान् हैं, आप्तकाम, पूर्णकाम हैं, लेकिन ब्रज में वे अपने आप को नन्दनन्दन मानते हैं - मैं नन्द महाराज का पुत्र हूँ। वे भगवान् नहीं हैं कि जो चाहा, जब चाहा, हो गया। राधारानी उनके लिए दुर्लक्ष्य हैं, बहुत मुश्किल से प्राप्त होती हैं और उनकी इन्द्रियाँ सतत् उदग्रीव हैं उन्हीं को प्राप्त करने में, दोनों बातें हैं। एक तो मुश्किल से प्राप्त और आप परम उत्कण्ठित हो।

तो क्यों यह प्रार्थना कर रहे हैं? हे ठाकुर ! आपको ज़रुरत मेरी ही पड़ेगी। कैसे लाओगे उन्हें घर से जटिला से छुड़ाकर राधारानी को कैसे लाओगे? मैं आपकी मदद करुँगी। अच्छा ! और गुरुजनों की बाधाएँ आएँगी वह कौन समाधान करेगा? मैं करुँगी। आपको इतने कष्ट, आपकी राधारानी..., जब श्रीकृष्ण बाँसुरी बजाते हैं, तो राधारानी जब अभिसार को जाती हैं पथ पर, तो उन्हें पता ही नहीं होता वे कहाँ चल रही हैं। वे कभी विपथ हो जाती हैं, कभी-कभी बेहोश होकर गिर जाती हैं, उन्हें पकड़ेगा कौन? आपने तो बाँसुरी बजाई, आपको प्राप्त ही नहीं होंगी राधारानी मेरे बिना। समझे...?

Feeling करके करो प्रार्थना। भक्ति का मतलब जो है, वह प्रेममयी सेवा है, सारी feelings के साथ। अपने भावनाओं का पूर्ण समर्पण। देखो ठाकुर अकेले तो तुम्हें राधारानी प्राप्त नहीं होने वाली, मेरे बिना तुम्हें राधारानी के साथ विलास तो छोड़ो वे तुम्हें प्राप्त भी नहीं होंगी, तुम चाहे वेणु भी बजाओ। रास्ता कौन उन्हें पार करवाएगा? 'मैं'। तो इसलिए सतत् उदग्रीव इन्द्रियाँ..., तुम्हें बहुत ज़रुरत है राधारानी की। तो यह

सोच लो कि तुम्हें मेरी भी बहुत ज़रुरत है, मैं तुम्हारी मदद करुँगी। तो इसलिए 'गोविन्द', बोलकर सम्बोधित किया जा रहा है।

श्रीकृष्ण बोलें -- 'तुम्हारी राधारानी, वे भी तो मेरा दास्य चाहती हैं..., तो तुम सीधा मेरा दास्य क्यों नहीं चाहती? मेरा दास्य ही जानो।' नहीं-नहीं-नहीं-नहीं-नहीं ! मैं तुम दोनों का दास्य चाहती हूँ, परन्तु मेरे प्राण सारे राधारानी को बिके हुए हैं।

"राधाकृष्ण प्राण मोर युगल किशोर।
जीवने मरणे गति आर नाहि मोर।।"

(प्रार्थना २८ - श्रील नरोत्तम दास ठाकुर)

श्रीकृष्ण का लक्ष्य क्या रहता है? राधारानी सुखी हों। राधारानी का लक्ष्य क्या रहता है? श्रीकृष्ण सुखी हों। यह बात समझिए, राधारानी और कृष्ण दोनों ने एक दूसरे को आत्मसमर्पण किया हुआ है पूरा। और जब आत्मसमर्पण किया है उनको होश ही नहीं है कि कैसे बाकि कार्य होंगे। तो सारा जो लीला का भार है राधाकृष्ण का, वह सखियों के ऊपर है। ब्रज की लीला प्रारम्भ नहीं हो सकती सखियों के बिना, पूर्ति तो छोड़ दो।

"सखी विना एई लीला पुष्टि नाहि होए।
सखी लीला विस्तारिया सखी आस्वादय।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.२०३)

प्रारम्भ नहीं ..., पुष्टि छोड़ो। प्रारम्भ नहीं हो सकती। क्योंकि वे तो आत्मसमर्पण करके वे तो अपने आप को भूल चुकी हैं, उनको पता ही नहीं चलता, वे क्या कार्य कर रही हैं। जब श्रीकृष्ण राधारानी के विरह में होते हैं, वे पथ में चलते-चलते वे बेहोश होकर रोते रहते हैं, रोते रहते..., रोते-रोते नदी बन जाती है, इतने आत्मसमर्पण कर चुके होते हैं, उन्हें होश ही..., वे सोच रहे हैं कि राधारानी मेरी मादन रस से सेवा करना चाहती हैं, मैं फटाफट जाकर उनकी सेवा स्वीकार करुँ, मैं जाऊँ कैसे? वे उनके आनंद की स्मृति में बेहोश हो जाते हैं और आपको ढूँढने जाना पड़ता है। यहाँ राधारानी निकुंज में बैठी हैं श्रीकृष्ण का इंतज़ार कर रही हैं, वहाँ ठाकुर ने भी बोला है- मैं आऊँगा पर वे आएँ कैसे? आएँ कैसे? वे तो मूर्छित हैं-

"वेणुः करान्निपतितः स्खलितं शिखण्डं
भ्रष्टं च पीतवसनं व्रजराजसूनोः।
यस्याः कटाक्षशरघात-विमूर्च्छितस्य

तां राधिकां परिचरामि कदा रसेन।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि ३९)

'यस्याः कटाक्षशरघात' -- जिनके कटाक्ष शरघात..., जिनके कटाक्ष के घात..., घात-घातक हो जाता है जिनका कटाक्ष, उससे विमूर्छित हो जाते हैं। तो वह तो बहुत बड़ी बात है, अभी तो दर्शन भी नहीं हुए राधारानी के। राधारानी की स्मृति में श्रीकृष्ण मूर्छित हो जाते हैं। मंजरी क्या प्रार्थना करती हैं ठाकुर से? *"यस्याः कटाक्षशरघात-विमूर्च्छितस्य, तां राधिकां परिचरामि कदा रसेन"*-- मैं राधारानी तुम्हारी वह सेवा कब करूँगी, जब कृष्ण मूर्छित हो जाएँगे तुम्हारे कटाक्ष से? कटाक्ष ! और मूर्छित होंगे और तुम उनके..., उनको मादन रस से सेवा विलास करना चाहती हो। जब वे मूर्छित होंगे तो कैसे सेवा करोगी? हमने क्या बोला? जय राधे, जय कृष्ण, यह जय - ये हैं राधे, ये हैं कृष्ण और ये है वृंदावन और ये हो तुम। अपना role जानो, क्या role है तुम्हारा ब्रज में? वे बेहोश पड़े हैं, राधारानी उदग्रीव हैं मादन रस से उनकी सेवा करने को, वे जग नहीं रहे हैं। फिर बोलती हैं राधारानी- 'ए तुलसी, मैं तो थक गई इसको उठाकर, उठ नहीं रहे, तू उठा न, तू मेरी मदद कर।' 'ए तुलसी', 'ए सखी'- ऐसे बोलेंगी राधारानी आपको।

उपासना- उप आसन, आसन मतलब निकट रहना। उप, उप- निकट, निकट रहकर सेवा करना। उपासना यही है- आपके इष्टदेव के निकट रहकर उनकी सेवा करो। गौड़ीय वैष्णव मतलब वे दिन-रात राधारानी की सेवा कर रहे हैं। उनको राधारानी के सेवा के अलावा न कुछ दिखता है न कुछ सूझता है।

"जाग्रत-स्वप्न सुषुप्तिषु स्फुरतु मे राधापदाब्जच्छटा
वैकुण्ठे नरकेऽथवा मम गतिर्नान्यास्तु राधां बिना।
राधाकेलिकथा सुधाम्बुधि-महावीचिभिरान्दोलितं
कालिन्दीतटकुञ्जमंदिरवरालिन्दे मनो विन्दतु।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि १६५)

'जाग्रत'-- जाग रहे हो, तो राधारानी; सो रहे हो, तो राधारानी; और बिल्कुल भी सो रहे हो तब भी राधारानी। विमूर्च्छि..., जागृत-स्वप्न, स्वप्न में भी राधारानी, जाग्रत में भी, और *सुषुप्तिषु*-- जब चौदह (१४) इन्द्रियों का कार्य बंद रहता है। *सुषुप्तिषु*...

हम कृष्ण को प्रार्थना कर रहे हैं, उनको उनकी सेवा का पक्ष दिखाकर उनसे..., कृष्ण भक्ति मतलब वह भक्ति नहीं है कि हम यह सोचें कि मैं बद्धजीव हूँ, अनन्त पापों से ग्रस्त हूँ, जन्म-मृत्यु के सागर में पड़ा हुआ हूँ । कृप्या करके मुझे भगवद् धाम में वापिस

ले चलो, हम इसलिए भक्ति करते हैं? यह कृष्ण भक्ति ऐसे नहीं होती। इसे कहते हैं वैधी भक्ति। क्योंकि अगर आप ऐसे भक्ति कर रहे हो, इसका मतलब है भगवद्धाम जाना चाहते हो जन्म-मृत्यु के चक्र से छूटकर, ठीक बात है? भगवद्धाम कोई भी हो आपको क्या फर्क पड़ता है? उसमें कृष्ण भगवान् हों, गौरांग महाप्रभु हों, नृसिंह भगवान् हों, वामन हों, नारायण हों, आपको तो कोई फर्क नहीं पड़ता उससे। तो इस भक्ति को कहा जाता है- वैधी भक्ति, कि आपको भगवद् धाम जाना है और कृष्ण की दास्य के रूप में सेवा करने। परन्तु ब्रज की भक्ति ऐसी नहीं है। ब्रज की भक्ति होती है, हम श्रीकृष्ण से precisely प्रार्थना करते हैं कि 'हे कृष्ण, मुझे और कुछ नहीं चाहिए, मुझे केवल आपका सखा बनना है।' तो वे आपको सखा बनने की आप पर कृपा करेंगे। इसमें शब्द बोला गया है..., एक-एक शब्द पर ध्यान दीजिए- *'कैङ्कर्येणादभुत-नवरसेनैव मा स्वीकरोतु'*- मुझे आप स्वीकार करें। तो किसी भी जीव को किसी भी सेवा में श्रीकृष्ण स्वीकार करते हैं, आपकी इच्छा होनी चाहिए किसी सेवा की..., तो कृष्ण आपको सेवा में स्वीकार कर लेते हैं।

यदि आप सखा बनना चाहते हो, तो वैसी साधना करोगे तो कृष्ण आपको सखा के रूप में स्वीकार करेंगे। यदि आप सखी बनना चाहते हो, तो आपको सखी के रूप में भी स्वीकार करेंगे। और यदि आप गौड़ीय वैष्णव बनना चाहते हो, तो आपको मंजरी के रूप में भी आपको स्वीकार करेंगे, *मां स्वीकरोतु* -- मुझे स्वीकार करो आप। प्रार्थना कर रहें हैं। तो हमें भी यही प्रार्थना करनी है, क्या स्वीकार करो मुझे? अपनी राधारानी की दासी के रूप में मुझे स्वीकार करो। मुझे आपका directly दासत्व नहीं चाहिए। रघुनाथदास गोस्वामी क्या कहते हैं? "हे राधे, यदि तुम्हारी कृपा न हो तो मुझे व्रजधाम की या कृष्ण की मुझे क्या आवश्यकता है?"

"आमि कृष्ण कृपा भिखारी नाहि।
आमार ईश्वरी वृंदावनेश्वरी।।"

मैं कृष्ण कृपा का भिखारी नहीं हूँ, मुझे तो सिर्फ़ तुम्हारी कृपा चाहिए। तो यह हमें समझना होगा कि किस प्रकार से कृष्ण कृपा करते हैं। हमें कृष्ण से एक प्रकार से उनके..., उनकी सेवा की कामना करनी चाहिए। अगर सखा बनना चाहते हो उसी प्रकार से कामना करो दिन-रात। सखी बनना चाहते हो, दिन-रात उसी प्रकार से, और यदि मंजरी बनना चाहते हो तो दिन-रात उसी प्रकार। किसी एक प्रकार से सिद्ध होकर कामना करना। इसी सम्बन्ध में और भी श्लोक बताया जा रहा है कि श्रीकृष्ण के प्रति

हमारा प्रेम है वह direct प्रेम नहीं है, वह क्या है? निर्भर प्रेम है, निर्भर प्रेम ! direct नहीं है।

"राधापादसरोजभक्तिमचलामुद्वीक्ष्य निष्कैतवां
प्रीतः स्वं भजतोऽपि निर्भरमहाप्रेम्णाधिकं सर्वशः।
आलिंगत्यथ चुम्बति स्ववदनात्ताम्बूलमास्येऽर्पयेत्
कण्ठे स्वां वनमालिकामपि मम न्यस्येत् कदा मोहनः।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि ११८)

यह प्रार्थना भी आप कर सकते हो कृष्ण से, क्या?

"राधापादसरोजभक्तिमचलामुद्वीक्ष्य", *"राधापादसरोजभक्तिमचलामुद्वीक्ष्य"*, राधा चरणकमलों में मेरी अचल भक्ति देखकर..., उदवीक्ष्य मतलब देखकर। यह प्रार्थना कर रहे हैं- उदवीक्ष्य, देखकर, राधाचरणों में मेरी भक्ति देखकर *निष्कैतवां प्रीतः।* मेरी भक्ति कैसी है? *निष्कैतवाः*, निष्कैतव प्रीति है, कोई कपट नहीं है उसमें। *निष्कैतवां प्रीतः, स्वं भजतोऽपि- स्वं भजतोऽपि,* जो श्रीकृष्ण की सीधी उपासना करते हैं जैसे..., सखा करते हैं, करते हैं? सखी करती हैं और उनके दास हैं- रक्तक-पत्रक वे सीधी उपासना करते हैं, हमारा ऐसा नहीं है। गौड़ीय वैष्णव कैसे करते हैं? *"निर्भरमहाप्रेम्णाधिकं सर्वशः"*। तो यह है कि *निष्कैतवां प्रीतः स्वं भजतोऽपि, स्वं भजतोऽपि-* तुम्हारा जो सीधा भजन करते हैं, उससे भी ज़्यादा कृपा करते हो यह देखकर कि राधारानी की यह दासी है, इसकी प्रीति बिल्कुल निष्काम है।

कई बारी क्या होता है कि निकुंज वन में श्रीकृष्ण जा रहे होते हैं..., किसलिए जाएँगे निकुंजवन में कृष्ण? किसलिए जाएँगे, राधारानी, राधारानी को मिलने के लिए। राधारानी को ढूँढते-ढूँढते, तो वे तो पथ तो भूल ही जाते हैं कितनी बारी। आनन्द इतना ज़्यादा होता है कि मैं राधारानी को मिलूँगा। आप नहीं देखते कई बारी रास्ते में जा रहे होते हैं, इतना आनन्द होता है double चक्कर लगा लेते हैं। तो जब एक बद्ध जीव के प्रीति में इतना आनन्द है तो श्रीकृष्ण जब प्रेम करते हैं..., किससे? राधारानी से ! प्रेम की मूर्ति से ! तो कितने आनंद में होते हैं, तो स्वभाविक है उनका अपने आप को भूल जाना। तो भूल जाते हैं। निकुंजवन में जाते हैं तो एक कुंज मंदिर के बाहर आप..., आप कौन?

आप मंजरी, बारह वर्षीय सखी, आप रहते हो, माला, माल्य गुम्फ़न कर रहे हो, माला बना रहे हो। किसके लिए? उन्हीं के लिए। माला बना रहे हो। ठाकुर आपको आकर

बोल रहे हैं..., ठाकुर न बहुत प्रेम करते हैं, वे जानते हैं निष्कैतव प्रीति है, कि जो प्रेम है, उसमें कोई कपट नहीं है। ठाकुर यह सोचते हैं कि जो सखियाँ होती हैं, ललिता-विशाखा, उनका तो मुझसे समय आने पर कभी-कभी मिलन हो जाता है, मेरा अंग-संग हो जाता है परन्तु यह जो सखियाँ हैं या मंजरियाँ हैं राधारानी की, यह तो स्वप्न-

"अनन्य-श्रीराधा-पदकमल-दास्यैक-रसधी, हरेः संगे रंगं स्वपनसमयेनाऽपि दधती।
बलात् कृष्णे कूपासिकभिदि किमप्याचरति काप्युदश्रु मेंवेति प्रलपति ममात्मा च हसति।।"

(वृन्दावन महिमामृत १६.९४)

वे स्वप्न के समय भी *हरेर रंगं संगम* -- वे चाहती ही नहीं हैं हरि का संग स्वप्न में भी। तो यह प्रीति देखकर कृष्ण इतने खुश होते हैं, इतने खुश होते हैं कि *स्वं भजतोऽपि,* -- अपने को जो..., direct जो कृष्ण की पूजा करते हैं, भक्ति करते हैं, उनसे भी ज़्यादा कृपा करते हैं।

तो एक बारी कुंज में माल्य गुम्फन कर रही हैं मंजरी। कृष्ण आते हैं तो आनन्दित होते हैं। वे मंजरी की सेवा निष्ठा देखकर, फिर भी बोलते हैं..., ताकि सारे भक्त समाज में यह प्रचलित हो कि मंजरियों..., मंजरियाँ जो हैं, सर्वोत्तम कक्षा में हैं भक्ति की। मंजरियों से ऊपर कोई भी भक्त नहीं है! न था, न है, न होगा। तो सेवा निष्ठा, भक्ति निष्ठा, राधा निष्ठा स्थापित करने के लिए वे लीला करते हैं। क्या लीला? कृष्ण मंजरी को बोलते हैं कि- "हे सखी, अभी कोई भी हमें नहीं देख रहा, तो मेरा अंग-संग कर लो। और ललिता विशाखा की तरह अपनी राधाजी की भी सेवा कर लिया करो, कोई नहीं देख रहा।" उनके मन में यह वासना नहीं है कि वे संग करें, क्यों वासना नहीं है? क्योंकि वे भगवान् हैं।

कृष्ण के मन में वासना कैसे उत्पन्न होती है? यह आप समझिए, एक बार में समझ जाइए। कृष्ण आत्माराम हैं, आप्तकाम हैं। उन्हें कोई आवश्यकता नहीं किसी की। परन्तु यदि कोई भक्त किसी विशेष प्रकार से उनकी सेवा करना चाहता है, तो वह विशेष प्रकार की सेवा जो होती है, उनके हृदय में वह तरंग पैदा करती है, कि वही वाली सेवा वे ग्रहण करें। उन्हें आवश्यकता नहीं है। क्योंकि आपने सेवा की ऐसी भावना पोषित कर दी है तो वह पोषित कैसे..., पूर्णतः कैसे प्राप्त होगी, वे सेवा स्वीकार करेंगे। तो मंजरियों की तो स्वप्न में भी इच्छा नहीं होती कृष्ण के अंग-संग करने की। तो वह वासना ही नहीं है मंजरी की, तो श्रीकृष्ण के मन में वह वासना कभी भी जाग्रत नहीं

होती। न तो मंजरी के मन में वह वासना होती है, मैं कृष्ण का अंग-संग करूँ, न कृष्ण के मन में होती है। क्यों? क्योंकि उनके मन में वासना की तरंग नहीं उठती क्योंकि ऐसा प्रेम नहीं है..., direct प्रेम नहीं है। कौन सा प्रेम है? *निर्भरमहाप्रेम्णाधिकं*।

उनका निर्भर प्रेम है, किस पर निर्भर है? राधारानी ! राधारानी के स्वामी हैं इसलिए वे कृष्ण की सेवा कर रही हैं। तो जब वे देखते हैं तो कहती हैं..., मंजरी यानि कि हम कहती हैं... आप यह सोचो, लीला में जाओ, बैठो लीला में। सोचो। गौड़ीय वैष्णव मतलब जो राधारानी के साथ बैठकर चिन्तन कर रहा है, कि ठाकुर आपके सामने आ रहे हैं और आप ठाकुर को बोल रहे हो- "देखो कृष्ण, तुम ठीक कह रहे हो, तुम्हारा अंग-संग कौन नहीं करना चाहती? कौन तुम्हारे साथ विलास नहीं करना..., लक्ष्मी करना चाहती हैं और तुम ठीक कह रहे हो लेकिन जो तुम्हारा अंग-संग करके वह जो सुख है, वह तो एक बूंद बराबर है और मैं..., जानते हो मैं कौन हूँ? मैं राधादासी हूँ। जो राधा..."

देखो जितना प्रेम होगा उतना सुख मिलेगा भक्त को। सारे जीवों का प्रेम कितना होता है? एक बूंद के समान, अणु के समान। तो सुख कितना मिलेगा? अणु के समान। और राधारानी जो हैं, वे प्रेम का महा-समुद्र हैं। तो वे महा-समुद्र कृष्ण के महा-माधुर्य, महा-आनन्द का महा-आस्वादन निरन्तर करती हैं। और राधारानी जो हैं उनसे..., उनकी अभिन्न देह और अभिन्न प्राण हैं मंजरियाँ। तो वह सारा सुख जो राधारानी का सामुद्रिक होता है सुख, वह सारा सुख जो है वह मंजरियों में स्थानान्तरित, उनमें चला जाता है। ललिता-विशाखा वह सुख अनुभव नहीं करती, जो मंजरी अनुभव करती हैं।

पिछले श्लोक की एक व्याख्या में हम भूल गए एक बात बताना, श्लोक इस प्रकार था कि- *'कैङ्कर्येणाद्भुत'* और *'परमप्रेष्ठपादाब्जलक्ष्मीः'*- कि राधारानी के चरणों का जो सौंदर्य है, वही कृष्ण को कितना आकर्षक लगता है। ठीक है? और मंजरी पता है क्या होती है? मंजरी का देह किससे बना होता है? किससे बना होता है मंजरी का देह? जो राधारानी की परिमल माधुरी है, जो सुगन्ध निकलती है राधारानी की, वह जो माधुरी है, उससे आपका देह बना होता है। हम किससे बनी हुई हैं? अब यह शरीर किससे बना है? पृथ्वी-अग्नि-जल-वायु-आकाश। लेकिन आपका शरीर किससे बना है? राधारानी की परिमल माधुरी से। राधारानी की परिमल माधुरी से आपका शरीर गठित है। तो आप इतने special हो। तभी तो मंजरी बोलती है, "तुम ठीक बोल रहे हो कृष्ण, सभी तुम्हारा अंग-संग करना चाहते हैं लेकिन मैं... मैं तो राधादासी हूँ। राधारानी के चरणकमलों की परिमल माधुरी से मैं गठित हूँ, राधारानी की अभिन्न देह अभिन्न प्राण

हूँ। तो मैं एक बूंद..., तुम बताओ खुद जिसको समुद्र मिल रहा हो क्या वह एक बूंद का आस्वादन करना चाहेगा? इसलिए मैं तुम्हारा अंग-संग नहीं चाहती हूँ। परन्तु देखो मैं तुम्हारा काम कर देती हूँ, तुम अभी पथ भ्रमित हो गए हो, राधारानी से मिलना चाहते हो, चलो मेरी उँगली पकड़ो मैं तुम्हें सही रास्ते पर लेकर चलती हूँ।" तो कुंज में लेकर आती हैं मंजरी यानि कि आप और ठाकुर का मिलन ठकुरानी से करवाते हैं। इस प्रकार से यह लीला गठित होती है।

तो यह तो हमने बताया कि *उद्वीक्ष्य,* ठाकुर देखते हैं यह अचल निष्ठा, तो वे एकदम अति प्रसन्न हो जाते हैं। राधारानी यह निष्ठा देखकर और प्रचार करना चाहती हैं, कई बारी राधारानी बोलती हैं- "देखो ठाकुर, तुम इतने पथ-भ्रमित हो गए थे और मेरी सखी ने मिलन करवाया। उसको पुरस्कार दे दो, इसे अपना आलिंगन प्रदान करो।" तो मंजरी क्या करती हैं, "छी-छी-छी-छी...हटो-हटो-हटो-हटो-हटो ! अपना आलिंगन अपने पास रखो मुझे नहीं चाहिए।"

तो ठाकुर..., यह नहीं कि ठाकुर की इच्छा है, आप समझिए बात को। ठाकुर की इच्छा नहीं है। वे मंजरियों का गौरव स्थापित कर रहे हैं। मंजरियों का गौरव तो ठाकुर के हृदय में वास करता है। अरे ! एक सामान्य भक्त का गौरव ठाकुर के हृदय में वास करता है जो निष्काम हो, तो यह तो मंजरी हैं, सेवा रस की मूर्ति हैं। ठाकुर तो गद्गद् रहते हैं मंजरी को देखकर, दर्शन करके, यशोदा माता भी। यशोदा माता...

अब हमने बोला जय राधे, जय कृष्ण, जय वृंदावन। अब वृंदावन में यशोदा माता..., जैसे ही मंजरी घर आई, आपका दर्शन करती हैं, उन्हें ऐसे लगता है वे राधारानी का ही दर्शन कर रही हैं। अभिन्न देह अभिन्न प्राण हैं, बिल्कुल ऐसे ही लगता है उन्हें।

मणि मंजरी भी कहती हैं, जब कोई साधना कर रहा हो, सखी, देखो सखी ! मेरी बात सुनो, मेरा अनुभव के आधार पर बता रही हूँ..., बोलते हैं न हम? मेरा अनुभव सुनो, मुझे पता है। तो मणि मंजरी बोलती हैं- "देखो मुझे पता है, तुम एक काम करो सब चीज़ें छोड़ो, राधारानी से अपना दासीत्व को पक्का कर लो। यदि यह पक्का हो गया तो ठाकुर तो तुम्हारे पीछे-पीछे भागते हुए आएँगे। क्यों? एक तो उन्हें यह बात की बहुत खुशी है कि तुम उनकी, उनको परमानन्द प्रदान करने वाली राधारानी, उनकी तुम सखी हो, तो इसी बात से वे इतने खुश हैं। दूसरा, जब उन्हें वे प्राप्त होने में कठिनाई होगी, तुम्हारा ही तो आश्रय लेंगी वे। तो तुम सब कुछ छोड़कर ठाकुर से सम्बन्ध स्थापित मत करो, राधारानी से सम्बन्ध स्थापित करो।" तो यह प्रार्थना हमने करनी है ठाकुर से।

और राधारानी से क्या प्रार्थना करनी है? आप सारी प्रार्थनाएँ जानो, खरी प्रार्थना। 'जय राधे' मुँह से बोलना नहीं है हृदय से बोलना है। 'जय कृष्ण' और 'जय वृंदावन', तो कृष्ण की भी जय कैसे करनी है, वह हमने बताया। राधा की जय कैसे करनी है और बताएँगे।

"सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणी नवोन्मीलन्महामाधुरी
साम्राज्यैकधुरीणकेलिविभवत्कारुण्यकल्लोलिनी।
श्रीवृन्दावनचन्द्रचित्तहरिणीबन्धस्फुरद्वागुरे
श्रीराधे नवकुञ्जनागरि तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि २०७)

यह प्रार्थना करनी है उनसे कि *'सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणी'*-- कि राधारानी जो आपका प्रेम है वह तो एकदम गाढ़ा प्रेम है।

'सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणी नवोन्मीलन्महामाधुरी' -- आपका, श्रीकृष्ण को नव-नव प्रकार से आप आनन्द प्रदान करती रहती हैं। फिर आगे?

'श्रीवृन्दावनचन्द्रचित्तहरिणीबन्धस्फुरद्वागुरे' -- आप वृंदावनचन्द्र का चित्त हरण करती हैं, कैसे?

'बन्धस्फुरद्वागुरे'-- आपका जो रूप है वह किसके समान है? एक जाल। मछुआरा होता है, जाल होता है, *'बन्धस्फुरद्वागुरे'*, वागुरे समझते हैं? जाल।

'बन्धस्फुरद्वागुरे' -- आपका माधुर्य तो एक जाल के समान है जो *'वृंदावनचन्द्रचित्तहरिणी'*, वृंदावनचन्द्र के चित्त को हर लेता है।

"श्रीराधे नवकुञ्जनागरि तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः"- हे राधे, आप तो निकुंज क्रीड़ा करने में सुनिपुण हो, लेकिन उसमें आवश्यकता मेरी ज़रूर पड़ेगी। आपका उत्सव है, विलास उत्सव रहता है आपका निकुंज में। *'तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः'*।

जो राधारानी की सेवा है न यह ठाकुर की सेवा..., यह भगवान् की सेवा की तरह नहीं है। भगवान् की सेवा मतलब, सम्भ्रम-संकोच, डर-डरकर। ब्रज में सम्भ्रम-संकोच शब्द भी नहीं है, वैसे सेवा तो छोड़ दो। शब्द ही नहीं है। वह डर-डरकर, डर-डरकर, डर-डरकर..., यह तो नृसिंह भगवान् के लोक में होता है, भगवान् राम के लोक में होता है, भगवान् नारायण के लोक में होता है, इसी को वैधी भक्ति कहते हैं कि मैं जन्म मृत्यु के सागर में पड़ा हूँ, आप कृपा करके मुझे बाहर निकालो।

"'अंघरिपद्मसुधा'य कहे 'कृष्णसंगानन्द'
वैधी भक्ति करे ना पाइये व्रजेन्द्रनन्दन।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.२२६)

वैधी भक्ति करके व्रजेन्द्रनन्दन की प्राप्ति नहीं होती है।

भगवान्..., चैतन्य चरितामृत में बताया जा रहा है कि -

"सकल जगते करे मोरे वैधी भक्ति।
वैधी भक्त्ये व्रजभाव पाइते नाहि शक्ति।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत आदि लीला ३.१५)

सकल जगत मोरे करि वैधी भक्ति -- किसलिए भक्ति करते हैं भक्त लोग ज़्यादातर? कि मैं जन्म-मृत्यु के सागर में हूँ, मुझे बाहर निकालो। *"सकल जगत मोरे करि वैधी भक्ति"।*

'वैधी भक्ति व्रजभावे पाइते नाहि शक्ति'-- जो वैधी भक्ति है न इससे ब्रजभाव प्राप्त नहीं हो सकता।

जब हम भगवद् नाम लेते हैं, तो यदि हम सिर्फ़ भगवद्नाम ले रहे हैं और नारायण जो हैं, वे सुनेंगे तो कृपा करेंगे। भगवद् नाम किसलिए ले रहे हो? कि मुझे भगवान् का दास्य प्राप्त हो और तो कोई कारण नहीं है, इसीलिए ले रहे हो भगवद् नाम? तो जब भगवान् नारायण होंगे तो वे आपका नाम सुनकर अपना दास्य प्रदान कर देंगे, ठीक बात है? यदि आप निष्काम रुप से लोगे, समझ रहे हो बात को? हम आपको संस्कृत न बोलकर, बंगाली न बोलकर, वह भाषा में बता रहे हैं जो आपको समझ आएगी।

जब आप नारायण से, वैकुण्ठपति से प्रार्थना करोगे..., कि भगवद् नाम लेंगे कि आप मुझे जन्म-मृत्यु के सागर से छुड़ाओ तो वे आपको दास्य रुप से सेवा प्रदान करके कृतार्थ कर देंगे, उसमें कोई संदेह नहीं है। लेकिन जब आप श्रीकृष्ण से प्रार्थना करोगे कि मुझे सेवा दो, सेवा दो, तो नारायण के लोक में तो एक ही सेवा मिलती है वैकुण्ठ लोक में, कौन सी सेवा? दास्य रुप में, क्योंकि सोचना ही नहीं पड़ता। दास्य सेवा दो और कृतार्थ करो! दो, कृतार्थ करो! दो, कृतार्थ करो! बस! लेकिन आप ठाकुर से प्रार्थना कर रहे हो, तो ठाकुर तो सोच में पड़ जाते हैं, मेरी तो बहुत प्रकार की सेवा है, तुम कौन सी चाहते हो? भगवन् नाम तो ले रहे हो, अच्छी बात है मेरा नाम ले रहे हो।

और भगवान् के मन में भी वह eagerness... what do you call eagerness? Eagerness? उत्कण्ठा है, आपको सेवा देना, सेवा प्रदान करने की तो वे यह सोच रहे हैं- "मैं दूँ कौन सी? यह तो माँग ही नहीं रहा।" भगवद्... मेरा नाम तो ले रहा है, माँगे तो मैं दूँ। वे हमारे से ज़्यादा उत्कण्ठित हैं हमें सेवा देने के लिए, पर हम माँगे तो सही कोई एक सेवा, उसमें निष्ठ होकर, एकान्तिकी भक्त तो बनें। हम बनेंगे तो वे सेवा देकर कृतार्थ करेंगे।

तो जो हम जन्मों-जन्मों तक हरिनाम लेते हैं, भगवद्नाम लेते हैं, उसकी कृपा क्या होती है? जब हरिनाम लेते-लेते लेते-लेते भगवान् हमें क्या करते हैं? जब अति प्रसन्न हो जाते हैं तो हमें एक सद्गुरु के चरणाश्रय में डाल देते हैं। फिर हम सद्गुरु से कृष्ण कथा सुनकर पूर्ण रूप से कृतार्थ होते हैं, उनकी सेवा का अधिकार प्राप्त करते हैं और उनको ब्रजधाम में उनकी प्राप्ति करते हैं। सारे भगवन्नाम लेने के बाद एक ही कृपा होती है कि हमें सद्गुरु के आश्रय में वे डाल दें, जिससे हम उनकी प्राप्ति कर सकें। आज तक हमने जितना नाम लिया है, जितना धाम की सेवा की है, उसका एक ही फल है- हमें विशुद्ध श्रीकृष्ण की सेवा प्राप्त हो, विशुद्ध कथा प्राप्त हो।

'सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणी नवोमीलन्महामाधुरी'

कि आप... राधारानी बोलें, "तुम मेरा दास्य चाहती हो, मैं तो खुद ही पराधीन हूँ, मैं तो खुद ही श्रीकृष्ण की सेवा नहीं कर पाती, तुम्हें क्या मैं सेवा दूँगी? मैं तो कुछ..." विवाहित हैं न राधारानी? तो वे खुद ही बंधी हुई हैं। तो मंजरी कहती हैं, "आप मुझे सेवा नहीं..., आपको कृष्ण मुश्किल हैं प्राप्त होने? आपको मुश्किल हैं? आपको? हाँ राधारानी आपको श्रीकृष्ण मुश्किल नहीं हैं, *श्रीवृंदावनचन्द्रचित्तहरिणी,* आपने उनका चित्त हरा हुआ है। वे तो खुद आपके पास भागते हुए आ जाते हैं, तो यह मुझको झूठ तो मत..., कि आपके लिए मुश्किल हैं। आपके लिए कोई मुश्किल नहीं हैं।" राधारानी बोल रहीं हैं, "अरे! मैं तो पतित..., मुझमें तो प्रेम ही नहीं है, मैं तुझे क्या दूँगी?" "आपमें प्रेम नहीं है? *सान्द्रप्रेमरसौघवर्षिणी* -- आप तो प्रेम की मूर्ति हो, मूर्ति, Deity of love ! विशुद्धप्रेम की मूर्ति हैं राधारानी। तो आपमें प्रेम नहीं है तो किसमें?" "अच्छा ठीक है, है मुझमें प्रेम, हाँ, कृष्ण मुझसे आकर्षित होते हैं सब ठीक है। पर तुम तो बद्ध हो, तुम तो अपने पतित..., तुम तो पापी हो, तुममें तो इतनी वासनाएँ हैं, तुम निन्दा करते हो, सब है, मैं तुम पर कृपा क्यों करूँ?" राधारानी तुमसे पूछें, क्या बोलोगे? फिर बोलते हैं, *कारुण्यकल्लोलिनी*-- आप कारुण्य का भी महासमुद्र हो। आप करुणा करके मुझ पर कृपा कर दो। *'पापभाजम्'* -- हूँ, पापी हूँ लेकिन आप कृपा करके मुझ पर कृपा..., करुणा

करके मुझ पर कृपा करो। अपना दास्य-उत्सव प्रदान कर दो। यह राधारानी से हमने प्रार्थना करनी है।

तो राधारानी की प्रार्थना आपको बताया। कृष्ण को कैसे प्रार्थना करनी है आपको बताया, ब्रज में क्या-क्या होता है बताया।

कुछ कृष्ण प्रसाद के बारे में बताएँ या आपके बारे में बताएँ? पहले किसके बारे में बताएँ? आपके बारे में बताते हैं।

"राधाकेलिकलासु साक्षिणी कदा वृन्दावने पावने
वत्स्यामि स्फुटमुज्ज्वलाद्भुतरसे प्रेमैकमत्ताकृतिः।
तेजोरुपनिकुञ्ज एव कलयन् नेत्रादिपिण्डे स्थितं
तादृक्सवोचित-दिव्यकोमलवपुः स्वीयं समालोकये।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि २६७)

यह आपके बारे में प्रार्थना है, जो आप प्रार्थना करते हो ब्रज से, राधारानी से, कृष्ण से- सबसे। यह क्या प्रार्थना है?

'राधाकेलिकलासु साक्षिणी कदा वृन्दावने पावने'-- इसका मतलब है कि हे वृंदावन ! आप मेरी राधारानी के और मेरे कृष्ण के साक्षी हो निकुंज लीलाओं के, आप साक्षी हो - *साक्षिणी, वृन्दावने, पावने।* आगे -

'वत्स्यामि स्फुटमुज्ज्वलाद्भुतरसे प्रेमैकमत्ताकृतिः' -- आपका जो राधारानी..., जो उज्जवल अद्भुत रस है, राधादास्य मंजरी भाव है, जो जिससे आपकी उपासना होती है, कृप्या करके, *'प्रेमैकमत्ताकृतिः'* -- जिससे मैं पागल हो जाती हूँ बिल्कुल। ब्रज में कोई बैठने का स्थान नहीं है कि हाँ हम ब्रज में बैठकर देख रहे हैं राधाकृष्ण को, ऐसा नहीं है। आपका एक role होता है, आपकी सेवा होती है। तो सेवा मंजरी की ऐसे होती है - *प्रेमैकमत्ताकृतिः,* मत्त हो जाती हैं मंजरियाँ बिल्कुल।

अब यह प्रार्थना कर रही हैं कि- हे वृंदावन ! आप तो साक्षी हो राधाकृष्ण की लीलाओं के। तो, *'तेजोरुपनिकुञ्ज एव कलयन्'* -- तो निकुंज की सेवा उपयोगी जो *'नेत्रादिपिण्डे स्थितं'*..., क्या प्रार्थना करनी है वृंदावन से? *नेत्रादिपिण्डे स्थितं*-- जो निकुंज के लिए उपयोगी नेत्र हैं वे मुझे प्रदान करो। जो निकुंज के लिए उपयोगी नासिका है, नासिका, *नेत्रादिपिण्डे स्थितं,* मुझे नासिका प्रदान करो, मुझे आँखें प्रदान करो, मुझे त्वचा प्रदान करो, मुझे वह कर्ण दो। क्या बोल रहे हैं? *'तादृक्सवोचित'* -- 'तादृक', वह... वैसा,

'स्व उचित' मेरे लिए..., जो जिससे मैं सेवा कर सकती हूँ, *स्व उचित*। *'दिव्यकोमलवपुः'*-- वह दिव्य, Spiritual body मुझे प्रदान करो। *नेत्रादिपिण्डेस्थितं*, कौन सी Spiritual body? जो निकुंज सेवा के लिए उपयोगी हैं। *'नेत्रादिपिण्डेस्थितं स्वीयं समालोकये'*, *स्वीयं*, ऐसा मुझे नेत्र प्रदान करो मैं स्वयं को देख पाऊँ - *'स्वीयं सम आलोकये'*। यह ब्रज से प्रार्थना है।

हम क्या प्रार्थना कर रहे हैं? राधा से या कृष्ण से या ब्रज से? कोई प्रार्थना कर रहे हैं जैसे आचार्यपादगण करते हैं? तो कैसे राधा मिलेंगी? कैसे कृष्ण मिलेंगे? कैसे ब्रज मिलेगा? *'तेजोरूपनिकुञ्ज एव कलयन्'*, *नेत्रादिपिण्डेस्थितं'*..., नेत्र, यह वासना हमारे हृदय में भभकती रहनी चाहिए- *नेत्रादिपिण्डेस्थितं। तेजोरूपनिकुञ्ज एव कलयन्*- तुम निकुंज के सेवा, सेवा उपयोगी नेत्र मुझे प्रदान करो।

राधारानी से यही प्रार्थना, ब्रज से यही प्रार्थना- हे ब्रज के आकाश! हे ब्रज के पक्षी! हे राधारानी! हे कृष्ण! मुझे समझा दो बस एक बार, 'राधारानी के सिवा मेरा और कोई नहीं है, कृष्ण भी नहीं हैं।' नहीं चाहिए कृष्ण। 'आमि कृष्ण कृपा भिखारी नाइ', क्यों? *'तादृक्सवोचित दिव्यकोमलवपुः'*, *'तादृक्सवोचित'*- मेरे लिए उचित, दिव्य कोमल transcendental body - कोमल। Transcendental soft Spiritual body- मंजरी देह, *स्वीयं समालोकये* - मुझे प्रदान करो ताकि मैं खुद को देख पाऊँ, जान पाऊँ मंजरी देह में। क्योंकि सामान्य नासिका से तो आप ब्रज में प्रवेश नहीं कर सकते, निकुंज में कैसे प्रवेश करोगे?

अगर आपके पास वे आँखें हैं जो नन्द-यशोदा के पास हैं तो भी आप निकुंज के दर्शन नहीं कर सकते, समझ रहे हो? तो भी दर्शन नहीं कर सकते आप, आपके पास यशोदा की आँखें भी हों, ललिता की आँखें हों, तब भी वह निकुंज लीला के दर्शन नहीं कर सकते। क्यों? क्योंकि उसके लिए विचित्र नेत्र चाहिए होते हैं। कौन से नेत्र? जो राधारानी के परिमल माधुरी से उत्पन्न देह है, वह देह से बने हुए नेत्र। *'तेजोरूपनिकुञ्ज एव कलयन् नेत्रादिपिण्डेस्थितं'* -- यह प्रार्थना करनी है।

आप सोचें कि - 'भई मैं प्राप्त कर पाऊँ, न कर पाऊँ इस जीवन में', यह नहीं सोचना। कैसी प्रार्थनाएँ करनी हैं? श्रील प्रबोधानन्द सरस्वती बता रहे हैं-

"यत्र यत्र मम जन्मकर्मभिनरिकेऽथ परमे पद मम।
राधिकारतिनिकुञ्जमण्डली तत्र तत्र हृदि मे विराजताम्।।"

(श्रीश्रीराधारस सुधानिधि २६८)

यत्र यत्र मम जन्मकर्मभिर -- मेरे पाप कर्म हो, गन्दे कर्म हो, अच्छे कर्म हो, कहीं भी जन्म हो मेरा, कहाँ पर होगा...? नरक में हो, वैकुण्ठ में हो जाए, चाहे नरक में मेरा जीवन हो या वैकुण्ठ में, राधा..., *राधिकारतिनिकुञ्ज मण्डली* -- जो राधिका के निकुंज में जो दर्शन करने का सौभाग्य है, जो वह छवि है, जो वह आनंद है, *तत्र तत्र हृदि में विराजताम्* -- मेरे हृदय में बस वह विराजमान रहे। मैं वैकुण्ठ में भी पहुँच जाऊँ तो मुझे कभी भी नारायण के दर्शन और..., कोई कभी भी मुझे नहीं चाहिए। वे बोल रहे हैं, आप क्यों चले जाओगे, वैकुण्ठ में या कुछ भी...? बोला किसी भी कारण से अगर जाना भी पड़ जाए न, बस राधारानी की निकुंज मण्डली मेरे हृदय में रहे बस। मुझे न नारायण चाहिए..., नारायण छोड़ो कृष्ण नहीं चाहिए मुझे तो बिना राधारानी के। यहाँ क्या बोला है? युगल रति? नहीं, *'राधिका रति निकुंज मण्डली'*।

कभी हम सोचें कि हम योग्य नहीं हैं यह लीला सुनने के..., इस प्रकार से, तो यह भ्रम को श्रीगौरांग महाप्रभु स्वयं दूर कर रहे हैं। गौरांग महाप्रभु क्या कहते हैं? महाप्रभु कहते हैं-

"व्रजवधुसंगे कृष्णेर रासादि-विलास।
जेइ इहाकहे शुने करिया विश्वास।।
हृद्रोग काम तार तत्काले हय क्षय।
तिनगुण-क्षोभ नाहि, महाधीर हय।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत अंत्य लीला ५.४५-४६)

इसका मतलब क्या है? *व्रजवधु संगे कृष्णेर रासादि-विलास*, जो व्रजवधु गोपियों के साथ जो रास आदि विलास होता है, *जेइ इहाकहे शुने करिया विश्वास* -- जो विश्वास के साथ इसका श्रवण करता है, या जो बोलते हैं, उनके साथ क्या होता है? उनका काम बढ़ता है? नहीं। क्या बोल रहे हैं? कौन बोल रहा है? कौन? कौन? भगवान् कृष्ण व राधारानी का युगल स्वरूप, विलास स्वरूप- राधाकृष्ण का परिणति, उनसे ज़्यादा राधाकृष्ण की लीला के बारे में गाम्भीर्य इनका किसको मालूम होगा? सामान्य व्यक्ति को? इस भूतल पर चलने वाले व्यक्ति को? वह comment करेगा किसको क्या करना चाहिए? नहीं।

गौरांग महाप्रभु से उत्तम authority कोई भी नहीं है। वे क्या बोल रहे हैं? *हृद्रोग काम*- हृदय का रोग क्या है? काम, lust *हृद्रोग काम तार तत्काले हय क्षय* -- तत्काल क्षय हो जाता है हृदय रोग कामना का, lust का। किसका? जो, *जेइ जन कहे शुने करिया*

विश्वास, हृद्रोग काम तार तत्काले हय क्षय -- तत्काल क्षय हो जाते हैं हृद-रोग कामनाएँ जो कि रास आदि विलास की लीलाएँ प्रमाणिक स्तोत्रों से सुनता है, प्रमाणिक परम्परा से जुड़कर, साधना करके सुनता है, उसका तत्क्षण सब कुछ अनर्थ इत्यादि, काम इत्यादि नष्ट हो जाते हैं। *तिनगुण-क्षोभ नाहि महाधीर हय* -- तीन गुण जो हैं, काम, क्रोध इत्यदि, यह तीनों गुणों के अन्तर्गत आते हैं। यह क्षोभ, यह आपको चुभेंगे..., they could not disturb you. *तत्काले महाधीर हय* -- धीर समझते हो? धीर मतलब वह किसी भी प्रकार से विचलित नहीं होता और महाधीर मतलब वह राधाकृष्ण की लीला देख रहा है, वह विचलित कैसे होगा?

यह साधना जो है, *साधन साध्य एइ* - यही साधना है, यही सिद्धि है। अच्छा साधना क्या होती है? साधना... आपको बताएँ साधना क्या होती है। एक होती है सिद्धि, goal... Goal को प्राप्त करने के लिए जो क्रिया-कलाप किया जाता है, जो कार्य किया जाता है, उसे साधना कहते हैं। यदि आप सखा बनना चाहते हैं, तो आपकी साधना अलग होगी, बिल्कुल अलग। यदि आप सखी बनना चाहते हैं, तो आपकी साधना बिल्कुल, बिल्कुल अलग होगी। और यदि आप मंजरी बनना चाहते हैं, तो आपकी साधना बिल्कुल अलग होगी। कई बारी सोचते हैं कि "नहीं, हम भाव की अवस्था में, प्रेम की अवस्था में आ जाएँगे, तब हम साधना शुरु करेंगे राधाकृष्ण की", ऐसा नहीं है। रुचि, आसक्ति, भाव, प्रेम। किस चीज़ की रुचि होगी? निष्ठा किस चीज़ में आएगी?

"आदौ श्रद्धा ततः साधुसंगोऽथ भजनक्रिया।
ततोऽनर्थनिवृत्तिः स्यात्ततो निष्ठा रुचिस्ततः।।
अथासक्तिस्ततो भावस्ततः प्रेमाभ्युदञ्चति।"

(भक्तिरसामृत सिंधु १.४.१५,
श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला २३.१४-२३.१५)

अनर्थ निवृत्ति, यह सब हो गया..., निष्ठा, रुचि, आसक्ति, भाव, प्रेम। निष्ठा किसमें?

- अगर आप साख्य रस प्राप्त करना चाहते हो, तो उसमें निष्ठा, साख्य रस में रुचि, साख्य रस में आसक्ति, साख्य में भाव और साख्य रस में प्रेम।
- यदि आप गोपी बनना चाहते हो, तो गोपीभाव में निष्ठा, गोपीभाव में रुचि, फिर आसक्ति गोपीभाव में, गोपीभाव में फिर प्रेम प्राप्त होगा।
- और यदि मंजरी भाव की साधना करते हैं तो मंजरी भाव में निष्ठा होगी, फिर मंजरी भाव में रुचि होगी, मंजरी भाव में आसक्ति, फिर मंजरी भाव में भाव की

प्राप्ति फिर प्रेम की प्राप्ति। मंत्र सारे अलग होंगे हर साधना में, जो पुस्तकें होंगी वे बिल्कुल अलग होंगी।

जैसे हमने बताया, यदि आप साधना करना चाहते हो..., मान लो सखी भाव की या सखा भाव की, तो क्या आपको यह प्रार्थना करने की आवश्यकता है?

"निकुंज-यूनो रति-केलि-सिद्ध्यै, या यालिभिर् युक्तिर् अपेक्षणीया।
तत्राति-दक्ष्याद् अति-वल्लभस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्।।"
(श्री श्रीगुर्वष्टक ६ - श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर)

यह आपको प्रार्थना करने की आवश्यकता है, अगर आप सखा भाव में उपासना कर रहे हो? है कि नहीं? नहीं है, क्यों? क्योंकि वहाँ तक आपकी पहुँच ही नहीं है वहाँ तो, सेवा ही नहीं है आपकी वहाँ पर। अगर सखा भाव में..., तो भी आपको प्रार्थना नहीं करनी है; राम के भक्त हो तब भी वह प्रार्थना नहीं करनी है; और नृसिंह के भक्त हो तो वह प्रार्थना नहीं करनी है; और यदि सखा भाव में हो तब भी नहीं। यह प्रार्थना तो केवल मंजरी भाव के उपासकों को ही करनी है। सब प्रार्थनाएँ अलग हैं, मंत्र अलग हैं, भोग अर्पण की विधि अलग है।

अब हम आपको भोग अर्पण के बारे में कुछ...

रात्रि के आठ (८) बजे हैं, आप राधारानी के द्वारा मिष्ठान्, अन्न इत्यादि बनाकर आपको राधारानी ने भेजा है, कहाँ? नन्दालय में। जब नन्दालय में गए हैं, तो राधारानी ने जो पकवान बनाए हैं, उनके दर्शन सबसे पहले कौन..., लेकर कौन जा रहा है? आप अकेले। मैं मंजरी, मैं लेकर जा रही हूँ। किस देह से? *'सवोचित दिव्यकोमलवपुः स्वीयं समालोकये'* -- उस दिव्य कोमल वपु के द्वारा आप लेकर जा रहे हैं। तो जब आप लेकर गए भोजन, व्यंजन, तो जैसे ही यशोदा माता ने देखा उस व्यंजन को, तो क्या हुआ, उन्हें क्या लगा? हाय ! मेरे लाला की मंगलकारिणी आ गई। कैसे? मेरे लाला की मंगलकारिणी आ गई, कैसे? कि यह जो भोजन राधारानी ने बनाया है, यह वर प्राप्त है... राधारानी को..., ब्रज लीला में राधारानी को कौन वर देगा? वे सबको वर देती हैं - *मखेश्वरि, क्रियेश्वरि, स्वेधश्वरि, सुरेश्वरि, त्रिवेद-भारतीश्वरि, प्रमाण-शासनेश्वरि,* इनको कौन वर देगा?

पर फिर भी लीला है, उन्हें वर दिया जाता है, कि आप जो आप बनाओगी, जो पाएगा उसका सौन्दर्य बढ़ेगा, आयु बढ़ेगी और बल बढ़ेगा। तो जैसे ही यशोदा माता भोजन देखती हैं, वे सोचती हैं, 'मेरे लाला की आयु बढ़ेगी इससे, मेरे लाला का सौन्दर्य

बढ़ेगा, मेरे लाला का बल बढ़ेगा, सब मंगल-मंगल होगा राधारानी के बने हाथ के व्यंजनों से।' लीला में जाओ और देखो, इससे कोई किसी की काम वासना बढ़ रही है बताओ? आप यशोदा माता के साथ हो अपने दिव्य कोमल वपु में, आपकी काम वासना बढ़ रही है इसमें? नब्बे (९०) percent लीला तो हैं ही ऐसे ही, कि आप उनकी कोई सेवा कर रहे हो। काम वासना तो खत्म हो जाती है। क्या काम वासना क्या, होता क्या है काम, पता ही नहीं चलेगा।

यह तो यशोदा माता सोच रही हैं, आप क्या सोच रहे हो? आहाहाहा! यशोदा माता के वह सुख से कि यशोदा माता कितनी खुश हो रही हैं, मेरे बालक को, मेरे लाला की आयु बढ़ेगी, सौन्दर्य बढ़ेगा, और आप खुश हो रहे हो अपनी ठकुरानी की गर्विणी होकर, कि "मेरी..., मेरी स्वामिनी ने बनाया है भोजन।" "मेरी स्वामिनी का बना हुआ", एक तो वह गर्व है और ऊपर से यह खुशी देख रहे हैं यशोदा माता की, आप का हृदय परिपूर्ण हो जाता है। परिपूर्ण। एकदम परिपूर्ण। एकदम खुशी में आप डूब जाते हो, क्या करके? यशोदा माता को केवल थाली देकर।

अब detail में नहीं जाएँगे, बहुत विस्तृत लीला है। पर वह सब कुछ लीला हो गई, तो धनिष्ठा क्या करती हैं? कृष्ण का अधरामृत, कृष्ण का प्रसाद लेकर राधारानी के पास भेज देती हैं, आपको। फिर आप प्रसाद लेकर पहुँच गए हो। आप जैसे ही पहुँचे राधारानी के पास, तो आप क्या देख रहे हो? क्या देख रहे हो आप? राधारानी इंतज़ार कर रहीं हैं- "आहा, लड्डू पेड़े आएँगे?" न! राधारानी तो बेहोश पड़ी हुई हैं उस समय। राधारानी दिन में कितनी बारी बेहोश होती हैं, हम सोच भी नहीं सकते। यहाँ आपकी ईश्वरी हैं, आपकी ईश्वरी तो बेहोश ही हो जाती हैं हर बात में। जैसे ही कृष्ण से विरह हुआ, राधारानी मूर्छित हो जाती हैं। अब श्रीकृष्ण से विरह हो रहा है, श्रीकृष्ण नन्दालय में हैं और वे अपने घर में, तो वे बेहोश हो जाती हैं तो कितनी कोशिश करती हैं सखियाँ, उन्हें उठाने की, वे उठती नहीं हैं।

फिर आप आते हो, "हे स्वामिनी! मैं नन्दीश्वर से आ गई हूँ।" वे आया? वह बात सुनी कृष्ण लीलामृत के बारे में एक बूंद भी बोली तो राधारानी बोलती हैं ललिता को, "हे ललिते! ऐसे लग रहा था मैं एक बंजर भूमि पर, ऐसे श्रवण की बंजर भूमि पर सोई हुई थी, किसी ने कृष्ण लीलामृत की वर्षा कर दी हो, ऐसा मुझे स्वप्न में लग रहा था, ऐसा कुछ हो रहा है।" ललिता कहती हैं, "स्वप्न नहीं है, तुलसी आई है। यह तुलसी आई है अपनी नन्दीश्वर से।" तुलसी मतलब 'आप', आप तुलसी समझ लो, चारुकला या, "ए चारुकले, तू आ गई?" तो अपने गोद में बिठाती हैं राधारानी, फिर बोलती हैं

- "अब बता उसने खाया ठीक से?" यह आपकी सेवा है। सेवा का मतलब क्या है? जो आपके इष्ट को प्राणवन्त हो, उनको खुशी दे। यह आपकी सेवा है। तो यह साधना करोगे तो यही तो, तभी तो सेवा मिलेगी। चैतन्य चरितामृत में सिद्धान्त बताया गया है-

"बाह्य अन्तर इहार दुइत साधन, बाह्ये साधकदेहे करे श्रवणकीर्तन।
मने निजसिद्धदेह करिया भावन, रात्रिदिने करे व्रजे कृष्णेर सेवन।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला २२.१५६-२२.१५७)

ठीक है? *बाह्य अन्तर दुइ तो साधन,* जैसे हम भोग लगाते हैं, ठाकुर की सेवा करते हैं, हरिनाम लेते हैं, ग्रन्थ पढ़ते हैं, गुरु की सेवा करते हैं, तो यह बाह्य साधन है। एक अन्तर साधन भी है- जैसे आपने देखा कि..., कि राधारानी की एक मंजरी और आई हैं, उनको उनका मंजरी स्वरुप प्राप्त हुआ। तो दूसरा साधन है अपने अन्तर, अन्तश्चिन्तित मंजरी देह से राधारानी की इस प्रकार से सेवा करना। दो साधन हैं गौड़ीय वैष्णव के, क्या हैं वे दो साधन? एक तो श्रवण, कीर्तन, जप, मंत्र स्मरण, अध्ययन इत्यादि, और दूसरा है अपने अन्तश्चिन्तित देह से, मंजरी देह से, *दिव्य कोमल वपुः* - उस देह से सेवा करना। अब आप यशोदा माता के पास से भोजन लेकर..., यह आप सेवा करो।

दो साधन करने हैं गौड़ीय वैष्णवों को..., तो आप जब लेकर आए प्रसाद। हाँ, तो राधारानी ने गोद में बिठाया आपको- "हाय, उसने खाया? मैंने अच्छा नहीं बनाया था न? मीठा तो बिल्कुल भी अच्छा नहीं बना था।" ऐसे बोलते हैं न हम? माँ बोलती है बच्चे को या पत्नी बोलती है पति को- "मीठा तो बिल्कुल भी अच्छा नहीं बना था।" वैसे राधारानी..., "यह तो बिल्कुल अच्छा नहीं बना था, खाया था?" वे अच्छी तरह..., विस्तृत व्याख्यान आप करते हैं- "हाँ-हाँ, बहुत अच्छे से खिलाया था, यशोदा माता ने दो बारी दिया था", इस प्रकार से आप व्याख्यान करते हैं और राधारानी का उस माधुरी का आस्वादन करते हैं। फिर राधारानी कहती हैं..., धनिष्ठा ने मुझे कृष्ण अधरामृत, कृष्ण प्रसाद तुम्हारे लिए भेजा है... "आहा, जैसे ही राधारानी..., आपकी स्वामिनी सुनती हैं, उनके dry कान और dry प्राण, सब सुशीतल हो जाते हैं। एकदम आनन्द में आ जाती हैं।

प्रसाद... देखिए प्रसाद..., प्रसाद का जो आनंद है, प्रसाद के प्रति जो आकर्षण है, वह प्रेम के अनुरुप होता है। जितना ज़्यादा प्रेम, उतना ज़्यादा आकर्षण होगा प्रसाद के प्रति। तो सबसे ज़्यादा प्रेम किसका है? पूरे भौतिक-आध्यात्मिक जगत में? किसका है सबसे

ज़्यादा प्रेम? राधारानी का। तो श्रीकृष्ण प्रसाद के प्रति सबसे ज़्यादा आकर्षण किसका होता है? राधारानी का। सुनते ही, बस! और कुछ नहीं चाहिए।

फिर श्रीगौरांग महाप्रभु का अगर आप देखें गंभीरा लीला में, जगन्नाथपुरी लीला में तो गौरांग महाप्रभु के सामने प्रसाद लेकर आते तो, गौरांग महाप्रभु थोड़ा सा प्रसाद, कृष्ण-प्रसाद मुँह में डालते, राधा भाव में निविष्ट..., में डूबकर, तो वे थोड़ा सा प्रसाद लेते थे न, उसको शाम तक... सुबह प्रसाद लेते तो शाम तक सघन आवेश रहता था कृष्ण अधरों का, कृष्ण के होंठो का आवेश शाम तक रहता था। किससे? वह चावल से, वह लड्डू से। चावल, लड्डू नहीं हैं, उसमें कृष्ण के अधरों का अमृत मिला हुआ है। इसलिए बोला जाता है प्रसाद को- 'कृष्ण अधरामृत', वह मिला हुआ है। तो जैसे ही प्रसाद गौरांग महाप्रभु लेते, उसी में ही वे कई बारी डूब जाते थे। उन्हें कुछ सूझता नहीं था, ऐसे लगता था कृष्ण को ही आलिंगन कर रहे हैं।

तो राधारानी के पास जब प्रसाद आता है, तो यह आपकी सेवा है प्रसाद खिलाना। वह आसान काम नहीं है राधारानी को प्रसाद..., बहुत मुश्किल कार्य है। राधारानी प्रसाद का एक ग्रास मुँह में डालती हैं, तो आपको कई बार आनंद आता है, तो आपकी आँखें बंद हो जाती हैं कि नहीं? अगर प्राण छूट जाते हैं, इस भौतिक जगत में थोड़ा आनंद सा मिले। कईयों की खुशी से ही heart attack आ जाता है, होता है कि नहीं? तो राधारानी को जब कृष्ण के अधर का अमृत प्राप्त हो रहा है, तो उन्हें क्या लग रहा है? वे निकुंज में कृष्ण का अलिंगन कर रही हैं, उनका अधरों का, विलास आदि की उन्हें अनुभूति होती है, वे आनन्द में मत्त होकर..., कृष्ण स्मरण से पूरी भर जाती हैं और अन्दर का..., हृदय का जो अनुराग है, अनुराग का रंग क्या होता है? Red, लाल। वह लाल रंग - *'तप्तकांचन गौरांगी राधे वृंदावनेश्वरी'*, वह लाल रंग जो है तप्तकांचन की तरह mix... मिल जाता है और फिर क्या हो जाती हैं? कुमकुमांगी। कुमकुम के जैसी दिखने लग जाती हैं राधारानी। कुमकुमांगी हो जाती हैं और आप यह सब देख रहे हो। राधारानी अभी तप्तकांचनी, अब कुमकुमांगी हो गई। आप यह देख रहे हो। आप सोचो आप क्या देख रहे हो। तभी तो बोला जाता है, *'दास्योत्सवः तव क्रीतास्मि'* -- तुम्हारा दास्य उस समय मुझे खरीद लिया है पूरा। *'तव क्रीतास्मि दास्योत्सवः'*...

तो एक तो आँखें बंद हो रही हैं, फिर सखियाँ परिहास करके कुछ लीला बताते हुए, आप तो सबसे expert हो, मंजरियाँ, आप किसी..., अनुरूप बात बोलते हो, अनुरूप उनको छूते हो, किसी तरह वे कुछ ले पाएँ, फिर किसी तरह लेने पर वे अगली नहीं ले सकती, आपके यत्नों के बिना। यत्नात्, आप यत्न पूर्वक उनको फिर दूसरी ग्रास देते हो,

फिर उनका यही हश्र होता है। उनके चेहरे पर शत-शत भंगिमाएँ खिल रही होती हैं प्रसाद लेते समय। शत-शत, हज़ारों-हज़ारों भंगिमाएँ। एक तो रंग बदल गया, भंगिमाएँ बदल गई, आँखें बंद हो गई।

आप यह सोचो कोई बहुत सुन्दर व्यक्ति हो, जो उस..., अगर आप बस देखते रहो, कितना अच्छा लगता है न किसी सुन्दर व्यक्ति को देखना। देखते..., सिर्फ देखना कुछ भी न करे वह। कई बोलते हैं हम दर्शन करना चाहते हैं, देखना चाहते हैं। तो देखते रहो, बस देखते ही रहो। तो राधारानी को आप देख रहे हो तो देखते-देखते उनके अन्दर शत-शत प्रकार की भंगिमाएँ... सोचो क्या... राधारानी के दर्शन क्या होते हैं, आप सोच सकते हो? यह कृष्ण के मन में ऐसे ही लोभ जगा गौर बनने का...? राधामाधुरी आस्वादन करने का...? ये, ये हमारी राधारानी हैं! इनका प्रसाद लेना इतना विचित्र है, इतना अद्भुत है कि यह प्रसाद लेने का, आस्वादन लेने के लिए कृष्ण गौर बन रहें हैं। राधामाधुरी का विस्तृत आस्वादन।

राधारानी का प्रसाद लेना कोई सामान्य बात है? कोई lady प्रसाद ले रही है? कोई दासी प्रसाद ले रही है? नहीं, न कोई lady प्रसाद ले रही है, न कोई..., मंजरी प्रसाद सेवन कर रही है और प्रेम की मूर्ति, विशुद्ध प्रेम की मूर्ति राधारानी प्रसाद ग्रहण कर रहीं हैं, इतनी बड़ी घटना है, दिव्य घटना, आनन्दमयी!

आप किसी तरह उनको प्रसाद दे रहे हैं और राधारानी बिल्कुल उन्मादिनी हो जाती हैं, प्रसाद लेकर एकदम उन्मादिनी! उनको होश ही नहीं रहता। अब मैं और व्याख्या नहीं करूँगा इसमें अभी। आप यह सोचो कि कृष्ण का प्रसाद इतना आनंदमय होता है कि गौरांग महाप्रभु को सघन अवेश रहता है, ठीक है? और हम यहाँ कैसे प्रसाद..., भोग कैसे लगाते हैं हम?

- पहले श्रीकृष्ण को, फिर कृष्ण का..., हम यहाँ राधाकृष्ण को सीधा भोग नहीं लगाते।
- पहले कृष्ण को, फिर कृष्ण का प्रसाद राधारानी को,
- फिर राधारानी का प्रसाद हम लोग ग्रहण करती हैं- मंजरियाँ।
  तीन बारी offering होती है हमारी।

तो जब..., आप सोचो, पहले कृष्ण ने लिया वह इतना आस्वादनमय था। फिर राधा ने लिया तो कितना हो गया होगा वह? Double आस्वादनमय। और जब आप लोगे? तो वह

राधा और कृष्ण दोनों के अधरों का अमृत आपके भीतर जाएगा, तो आप कितने आनन्दमय अवस्था में होओगे? तभी तो बोला जा रहा है - *'तव क्रीतास्मि दास्योत्सवैः'*।

ये हैं राधे, ये हैं कृष्ण और ये है वृंदावन।